

भादरवा सुद १०, बुधवार ता. ३१-८-१९६०
ऋषभजिन स्तोत्र-गाथा-३१ थी ३४, प्रवचन-९

भगवान पद्मनंटी आचार्य मुनि भावविंगी संत एस भरतक्षेत्रमें करीब ८०० वर्ष पहले हो गये. उन्होंने यह एक ऋषभदेव भगवानकी स्तुतिका कथन किया है. भगवान ऋषभदेव तो बहुत छोटा छोटी सागरोपम पहले हो गये. उनको मानो समवसरणमें बिराजमान हैं जैसे समीपता देखकर भक्ति करते हैं, ऐसा वर्णन करनेमें आया है. भगवानकी भक्ति शुभभाव है, धर्म नहीं. वज्रुभाई!

धर्मिको आत्माका ज्ञानानंद शुद्ध स्वरूप है, शुद्ध विद्वानंदमूर्ति अनादिअनंत आनंद और पवित्र धाम आत्मा है. पुण्य-पापके विकल्पसे रहित, शरीर, कर्मसे रहित उसकी आत्माकी प्रतीतमें, ज्ञानमें, भानमें जब सम्यग्दर्शन होता है, तब धर्मिको परमात्मा प्रति भक्ति, पूजा, उनका विनय, बहुमान ऐसा भाव आये बिना रहता नहीं. वह भाव आता है उसको पुण्य परिणाम कलते हैं. शुभभाव कलते हैं. शुभभाव तो मुनिओंको भी भक्ति करनेमें आता है. और गृहस्थ भी भगवानकी प्रतिमा, यात्रा, पूजा, श्रवण, मनन धर्मि गृहस्थोंको भी शुभभाव-पुण्यभाव बंधभाव है तो भी आये बिना रहता नहीं. वह बंधभाव मुक्तिका कारण नहीं. वह बंधभाव-पुण्यभावसे धर्मकी प्राप्ति होती है ऐसा नहीं. परंतु तीव्र रागसे बचनेको ऐसा मंद राग, पुण्य, कषायकी मंदताता पुण्य परिणाम आता है, ऐसा यहां वर्णन किया है. ३० गाथा चली है. ३१. ६० गाथा है. ओवो.

पत्ताण सारणि पिव, तुज्झ गिरं सा गई जडाणं पि।

जो मोक्खतरुट्टाणे, असरिसफलकारणं होइ।।३१।।

जैसे समीपताको प्राप्त वृक्षोंको नदी उत्तम इल रूपी उत्पत्तिका कारण होती है. नदी. जो वृक्षके समीप नदी जाती है, नदी जाती है, तो उस वृक्षमें उत्तम इलकी प्राप्ति होती है. एसप्रकारसे हे प्रभु! सर्वज्ञपदमें उनकी वाणी नीकलती है तो उनके बलाने भक्ति करते हैं. पहलेसे लिया है. सर्वार्थसिद्धमें भगवान जब पूर्व भवमें थे, वहांसे लेकरके यहां तक आये हैं. नेमयंदभाई! वहांसे भक्तिका प्रारंभ किया है.

प्रभु! आप जब एस भवके पहले सर्वार्थसिद्धिमें थे, तब जो सर्वार्थसिद्धिके देवकी शोभा थी, वहांसे आप निकल गये और जब पृथ्वीतल पर आये, उसके बाद नष्ट हो गयी. जैसे परमात्माकी भक्ति जहां-जहां देखते हैं, वहां उनका बहुमान आता है. जैसे करके (कलते हैं), पृथ्वीतल पर आये तो पृथ्वीका वसुमति नाम हो गया. भगवान! आपके कारणसे. आपका जन्म हुआ तो ईन्द्रोंने, देवोंने आकर पंद्रह मास रत्नकी वृष्टि की. आपके

आनेसे पहले वह वसुमति नहीं थी और आप आये तो पृथ्वीका नाम वसुमति हुआ. उसका अर्थ कि भगवान सर्वज्ञ परमात्मा अथवा तीर्थंकर जहां जन्म लेते हैं, वही धन्य क्षेत्र आदि है. ऐसा कहकर भक्ति करते हैं.

कहते हैं, हे जिनेश! 'जो अज्ञानी भव,...' 'जडाणं पि' है न पाठमें? आत्माका जिसको भान नहीं, मैं कौन हूँ और मेरी आत्माकी प्राप्ति, मुक्तिकी कैसे होती है, इसकी जिसको ખબर नहीं जैसे अज्ञानी भव, 'आपकी वाणी प्राप्त करते हैं,...' आपकी वाणीको, वाणी तो बस है, लेकिन वाणीमें कहनेवाला जो भाव है, भगवानकी वाणीमें क्या आता है? कि तेरा स्वभाव शुद्ध चिदानंद वीतराग अविकारी है, उसकी तुम दृष्टि और स्थिरता और राग, पुण्य-पापका विकल्प विकल्प उठता है (वह) बंधका कारण है, उसकी तुम उपेक्षा करो. उसकी अपेक्षा करो नहीं. वज्रभाई! ऐसी वाणी भगवानकी है, उस वाणीको जो समझता है, वाणी वाणीके कारणसे प्राप्त करते हैं, 'वाणी प्राप्त करते हैं,...' ऐसा विभा है. वाणी प्राप्त करते हैं, इसका अर्थ (क्या)? वाणी तो वचन है, वचन वर्णशा. भगवानकी दिव्यध्वनि. उसमेंसे आगमकी रचना हुई. उस वाणीमें कहनेवाला वाच्य, वाच्य-भाव, जो आत्मा अविकारी अखंडानंद शुद्ध चिदानंद है, दया, दान, व्रत, तप, भक्ति, पूजाका जो शुभभाव होता है, उस बंधके कारणसे रहित आत्मा है. ऐसा भगवानकी वाणीमें आता है. समझमें आया? ऐसी वाणीको जो प्राप्त करता है, उसको क्या इव मिलता है?

उनकी भी 'वही गति होती है, जो भोक्षणी वृक्षके स्थानमें अत्युत्तम इव प्राणिका कारण होती है.' जैसे नदी वृक्षके मूलमें जाये तो उसको बड़ा इव आता है. आमका लो तो आम आदि (प्राप्त होते हैं). जैसे भगवान हमारे मूलमें आपकी वाणीका भाव यहि प्राप्त हो जाये... समझमें आया? वृक्षके मूलमें नदी जाती है न? तब इव होता है न? जैसे यहां कहते हैं, प्रभु! आपकी वाणी अरागी वीतरागी भवछेदक वाणी और पुण्य एवं पापका छेद करनेवाली आपकी वाणी है. आपकी वाणीमें ऐसी ध्वनि आती है. जो परमात्मपद, वीतरागपद और सर्वज्ञपद प्राप्त करावे ऐसी आपकी वाणी है. तो वह वाणी जिसके मूलमें गई, जिसकी श्रद्धा-ज्ञानमें ऐसा भाव आ गया, उसको अतिउत्तम भोक्षणीकी प्राप्ति होती है. समझमें आया? यहां बंध और बंधका इव वाणीमें आता नहीं, ऐसा कहते हैं. आप वीतराग हैं. प्रभु! आप तो सर्वज्ञ हो. एक समयमें तीन काल तीन लोक सर्वज्ञपदमें आप ज्ञानते हो और अविकारी पद भी ज्ञानते हो. ऐसी जो प्रथम अल्पज्ञता और राग पुण्य-पापका विकल्प था, उसको छेदकर अल्पज्ञता नाशकर सर्वज्ञ हुआ, पुण्य-पापका नाशकर वीतराग हुआ. ऐसी आपकी वाणी सुनकर जिसके मूलमें वह पानी प्राप्त हो जाता है, .. ओलो..!

जिस वृक्षके समीप नदी आती है, तब बड़े-बड़े इव हो जाते हैं. जैसे हे नाथ!

आपकी दिव्यध्वनि ऐसी निकलती है कि जिसके मूलमें यदि वाणी घुस जाये, वाणीका अर्थ वाणीमें कलनेमें आनेवाला वाच्य, वाणीका उपचारसे कथन है, आत्मा अजंडानंद प्रभु, सच्चिदानंद शुद्ध सिद्ध समान स्वभाव निर्विकल्प है, उसमें मूलमें आपकी वाणी पलुंच जाये तो उसको सम्यग्दर्शन, ज्ञान प्राप्त होकर क्रमशः मोक्षइलकी प्राप्ति होती है. उसमें कोई आश्चर्य नहीं है. आपकी वाणीमें ऐसी ताकत है. वह निमित्तसे कथन है. ताकत तो यहां समझे तो निमित्तकी ताकत कलनेमें आती है. नहीं तो ऐसी वाणी भी अनंत बार सुनी है.

यहां तो कलते हैं, हम उस निमित्तकी बात नहीं करते हैं. हम निमित्तसे कलते हैं, लेकिन आपका भाव हमारे हृदयमें घुस गया है कि आप तो आत्माको ज्ञाता-दृष्टा बताते हो. ज्ञाता-दृष्टा आत्मा. रागका करनेवाला नहीं, पुण्यक्रियाका करनेवाला नहीं, ऋषकी क्रिया करनेवाला नहीं. ऐसा आत्मा बताते हो, ऐसा हमारा वृक्षका मूल है, उसके मूलमें यदि आपकी वाणी घुस जाये तो हमें भी मोक्षरूपी इल प्राप्त करनेमें कोई आश्चर्य नहीं है. अल्पकालमें मोक्षरूपी इल प्राप्त करेंगे. ऐसा निःसंदेह आचार्य महाराज अपना हृदय लक्ष्मिमें गदगद होकर कलते हैं. और अपनी निःशंकता, निर्भयता और पूर्ण मुक्तिकी प्राप्ति आपकी वाणीसे होती है, दूसरेसे होती नहीं. कलौ, समझमें आया? सर्वज्ञ परमात्माके सिवा ऐसा उपदेश, ऐसा वाणीका वीतरागभाव कभी कोई वाणीमें अन्यमतिमें अल्पज्ञमें या अज्ञानीमें होता नहीं. ज्ञानी

भावार्थ :- 'जो जव ज्ञानी हैं, वे आपकी वाणीको प्राप्त कर, मोक्ष स्थानमें जाकर, उत्तम इलको प्राप्त होते हैं,...' अज्ञानीमेंसे ज्ञानी निकाला है. 'ईसमें तो किसी प्रकारका आश्चर्य नहीं;...' सम्यग्दृष्टि जव आत्मा ज्ञानस्वरूप चिदानंद चैतन्यमूर्ति है, ऐसा रागसे रहित होकर, राग हो, लेकिन उसको पृथक् कर, पुण्य-पापका विकल्प शुभाशुभ उपयोगसे पृथक् कर, अपने आत्माका जिसको भान हुआ, ऐसे ज्ञानीको आपकी वाणी मिले और मोक्ष मिले उसमें तो कोई आश्चर्य नहीं है. उसमें तो कोई आश्चर्य नहीं है. समझे?

'किन्तु हे भगवान! अज्ञानी पुरुष भी आपकी वाणीका आश्रय लेकर, मोक्ष स्थानमें उत्तम इलको प्राप्त करते हैं.' यहां तो बंधकी बात भी नहीं करते हैं. करते हैं वाणीसे, नेमयंदभाई! प्रभु! ओहोहो..! अंदर उछाला मारता आत्मा अंदर निर्विकल्प चैतन्य स्वभावसे भरा है, उसकी दृष्टि करनेका आपका उपदेश है. उसका ज्ञान कराकर उसमें लीन होनेका आपका उपदेश है. बीचमें शुभराग आदि आता है, लेकिन वह रजने लायक है, उससे लाभ होगा, ऐसा आपके उपदेशमें कभी होता नहीं. ऐसा उपदेश हो, वह वाणी वीतरागकी नहीं. वज्रभाई! सेठको सब रजना पडे न? यहां ना कलते हैं, पुण्यसे

धर्म नहीं होता ऐसा कहते हैं. भगवानकी वाणीसे भी धर्म नहीं होता, ऐसा कहते हैं. भगवानकी मूर्तिपूजासे भी धर्म नहीं होता, ऐसा कहते हैं.

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- निमित्तसे कथन करते हैं, आरोप करते हैं. वीतरागता बताते हैं न. उनकी वाणीमें क्या आता है? भवछेदक वाणी, प्रभु! भवका कारण और उसका इव, आपकी वाणीमें ऐसा आता ही नहीं. आपकी वाणी तो भवका नाश करानेवाली है. ऐसा समझकर ज्ञानी मोक्ष प्राप्त करे, उसमें क्या आश्चर्य है? हरा वृक्ष पानी यूँ ले, उसमें क्या? लेकिन सूँभनेकी तैयारी है, वह भी पानी यूँ लेता है तो इव आ जाता है. कछो, समझमें आया? अज्ञानी भी प्राप्त करता है.

'जिस प्रकार नदी, वृक्षके पास जाकर उत्तम इलोंकी उत्पत्तिमें कारण होती है; उसी प्रकार आपकी वाणी भी उत्तम इलोंकी उत्पत्तिमें कारण है,....' नदी वहाँ जाये. उसका अर्थ बात को घुमाकर ली है. जो कोई आपकी वाणीके समीप आते हैं, उसको वाणी समीप आयी ऐसा कहनेमें आता है. ओलो..! कछो, समझमें आता है? धन्नावालज्ज! वाणी भगवान सुनानेको जाते हैं? भगवान सर्वज्ञ त्रिलोकनाथ जहाँ समवसरणमें बिराजते हैं, उनकी वाणी सुननेको सत्मा जाती है तो कहते हैं कि सम्यग्ज्ञानी मोक्ष प्राप्त करे उसमें तो कोई आश्चर्य नहीं है. अज्ञानी अप्रतिबुद्ध मूढ़ जब आपकी वाणीको प्राप्त कर, आपकी वाणीका भाव समझकर अल्प कालमें मोक्षप्राप्ति करे, उसमें कोई शंका नहीं है. ऐसी आपकी वाणी है. निमित्तसे कथन है. भक्तिमें तो व्यवहारसे कथन है. व्यवहार आरोपित बात है और परमार्थ अनारोपित वस्तुका स्वभाव है.

ऐसे तो भगवानकी वाणी अनंत बार सुनी. यहाँ तो वह बात कहते ही नहीं. हमने तो सुनी वह सुनी, ऐसा कहते हैं. हमने तो आपकी वाणी बराबर सुनी. सुनीका अर्थ वह है, आप कहना चाहते हो, 'सुदपरिचिदाणुभूदा सव्वस वि कामभोगबंधकहा'. ईच्छा और ईच्छाका इव आपकी वाणीमें नहीं आता. वह बंधका कारण तो अनादिसे सुना है. ईच्छा उत्पन्न हो और ईच्छाका पुण्यबंध हो और उसका इव संयोग हो, ऐसी वाणी तो अनंत बार सुनी और ऐसी कामभोगकी अनंत कथा अनंत बार की. आप तो उससे भिन्न बात करते हो. ईच्छा और भोगसे निवृत्त हो. आत्मा अजंडानंद प्रभुकी आप दृष्टि कराते हो. हमारे मूलमें आपकी वाणी आ जाती है. हमारे मूलमें आपकी वाणी घुस जाती है. मधुर, आता है न? पंचास्तिकायमें आता है न? हितकर, मधुर और स्पष्ट. विशद्-स्पष्ट. आपकी वाणी प्रभु! हितकर है. हितकरका अर्थ मोक्ष करानेवाली. बंध करानेवाली आपकी वाणी है नहीं. पंचास्तिकाय भगवान कुंदकुंदाचार्यका बनाया हुआ, (कहते हैं), सर्वज्ञ आपकी वाणी तो हितकर है. हितकर तो मोक्ष है. मोक्ष करानेवाली है, बंध करानेवाली आपकी

वाणीमें भाव आता नहीं। अंधभाव है, अंधका कारण है उसको तो ज्ञेयके तौर पर जान लो। तुम्हारा स्वभाव नहीं है। ऐसी हितकर, मधुर, मनोहर। जिसको आत्माका रसिकपना प्रगट हुआ है, उसको वीतरागकी वाणी मधुर भीठी लगती है। मानो कानमें अमृत डाल रहे हो, .. भाई! ये दूसरी बात है, जैसे कमानेकी बात नहीं है। ये तो द्रो-पांच बाण पैदा हो, इलाना हो, याचा-भतीजा बैठकर आते करते हो, उस बातमें भीकास लगती हो। यहां वह नहीं है, वह सब तो पापकथा है। वज्रुभाई!

वीतराग..! आलाहा..! अरे..! प्रभु! तेरा तो चैतन्यस्वभाव है न, भगवान! ज्ञायक स्वभाव है न। परम स्वभावसे भरा परमात्मस्वभाव वीतराग तेरा है न, उसकी दृष्टि कर। मूलमें पदुंय जा, मूलमें जा। कहते हैं, अज्ञानीका अज्ञान नाश होकर आपकी वाणी उसके पास पदुंय जाती है, तो उत्तम इलोंकी प्राप्ति होती है। तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं है। अज्ञानी भी ज्ञानी हो जाता है और धर्मकी प्राप्ति कर मोक्षको प्राप्त होता है। ३१ (दुई). ३२.

पोयं पिव तुह पवयणम्मि, संलीणा फुडमहो कयजडोहं।

हेलाए च्चिय जीवा, तरंति भवसायरमणंतं।।३२।।

आलाहा..! हे नाथ! मानो समवसरणमें प्रभु बिराजते हो। और ईन्द्र जैसे १००८ नामसे स्तुति करते हैं न भगवानकी? १००८ नामसे, जैसे। ये मुनि तो पंचमकावके हैं। भगवानका विरह हुआ एतरो वर्ष (हो गये)। हमें विरह नहीं है, ऐसा कहते हैं। हमें तो आपकी वाणीकी समीपता हो गयी है। भाई! ओलो..! धन्नावावज्ज! वाणी-भगवानकी दिव्यध्वनि तो कहां रह गयी।

भगवान! हम पंचमकावके मुनि संत द्विगंबर हैं, आपकी वाणी हमारे समीप आ गयी है। जैसा आपने कहा था ऐसा शास्त्र है, ऐसा गुरुने हमको बताया तो आपकी वाणी हमारे समीप घुस गयी है। आपकी वाणीका हमें विरह है, ऐसा हम नहीं मानते। आपकी वाणी हमारे समीप आ गयी है। हमारे समीप आ गयी है। ओलो..लो..! उसका अर्थ कि वाणीके भावके समीप हम आ गये हैं। वाणीमें जो भाव कहनेमें आता है, उसके समीप हम हैं। आपकी वाणी हमारे मूलमें आ गयी है।

जिसके पास जलज विद्यमान है, उरवीं गाथा, जलज होता है न, जलज बडा, जिसके पास जलज विद्यमान है, वे मनुष्य जलजमें बैठकर, जिसप्रकार पुष्कल जलसमूहसे भरे हुए समुद्रको बात-बातमें तिर जाते हैं। आला..! बडा समुद्र हो, जलज साथमें है, जलजमें बैठा है न। बडा समुद्र हो तो भी तिर जाता है। जैसे हे नाथ! हे पूज्यवर! हे पूज्य! हे जिनेश! जो मनुष्य आपके वचनमें लीन हैं, वचनोंमें लीन है यानी? वाणी तो जड है। वाणी सुननेके कालमें भी राग आता है, शुभ विकल्प है। गाणधर सुनते हैं

तो भी शुभराग है, पुण्य है. वाणीमें कला हुआ अभेद चैतन्यस्वभाव, अभेद अकार स्वभाव अखंडानंद अनंत गुणका पिंड अकार है, ऐसी वाणी जो आप कलते हो, उस वाणीमें-वचनमें मनुष्य लीन हैं. वचनोंमें लीन है अर्थात् वचनोंमें कलनेमें आया भाव, ऐसा अपना निर्विकल्प ज्ञायक स्वभाव, उसमें जो लीन है. अर्थात् जिनको आपके वचन पर श्रद्धान है. क्या कलते हैं?

आपके वचन नाथ! सर्वज्ञ वीतराग, आपकी वाणी बारह अंग, पूर्व अकसाथ निकलती है. ऐसी आपकी वाणीमें जिसको श्रद्धा है तो आपकी वाणीमें आत्मा जैसा आया, पुण्य-पाप जैसा पृथक् नौ पदार्थ है, नौ पदार्थ है,... पंचास्तिकायमें आता है न? ज्व और पुद्गलके संयोगसे सात पर्याय होती है. ऐसा वहां टीकामें शब्द आते हैं. संयोगसे सात पर्याय होती है. संयोगसे होती है. भगवान आत्मा राग-द्वेषकी उत्पत्ति होती है वह आस्रव है. वह कर्मके निमित्तके संबंधसे होती है. और आत्मामें, आत्मा शुद्ध ज्ञायक है उसके समीप होकर, अकार होकर जब सम्यग्दर्शन, ज्ञान अर्थात् संवर, निर्जरा हुई तो कर्मका निमित्तका अभावरूप संयोग वहां है. और पूर्ण अभाव होकर मुक्ति होती है. और थोड़ा अभाव होकर अपनेमें संवर, निर्जरा स्वभाव समीप होकर होते हैं. भगवान! नौ पदार्थकी पृथक्ता-पृथक्ता, नौ का कार्य भिन्न-भिन्न कला, नौ पदार्थका कार्य भिन्न-भिन्न कला. समझमें आया? क्या?

आत्माका कार्य ज्ञाता-दृष्टा होना. संवरका कार्य राग-द्वेषकी उत्पत्ति नहीं होना, निर्जराका कार्य शुद्धिकी वृद्धि होना. मोक्षका कार्य पूर्ण आनंदकी प्राप्ति होना. और पुण्य-पापका परिणाम जो होता है वह आस्रवका कार्य है. आस्रव मलिनभाव है. ओहोहो..! और वह अटक-रुक जाता है वह बंधकार्य है. ऐसा प्रत्येक पदार्थका आपने कार्य बताया, उसकी जिसके हृदयमें श्रद्धा घुस गई, उसे मुक्तिका मार्ग दाथमें आ गया. आपके वचनोंमें श्रद्धा है, वे मनुष्य भी बहुत आश्चर्यकी बात है, पलमात्रमें अनंत संसाररूपी सागरको तिर जाते हैं.

श्रद्धानवान. जलज. बड़ा दरिया हो तो जलजसे तिर जाता है. ऐसा अनंत संसारसमुद्र-उदयभाव-विकारभाव पडा है, परंतु आपने कला ऐसा उसका कार्य और स्वभावका कार्य जिसकी दृष्टिमें आया, श्रद्धान-रुचि बराबर जम गई कि मैं ज्ञायक हूं, राग-द्वेष आदि पृथक् है, पुण्यबंध आदि पृथक् है, दया, दान, भक्ति, व्रत, तप, जपका विकल्प, पूजा, नाम स्मरण आदि सब बंधका कारण है. वह अपना धर्म नहीं. ऐसी जिसको नौ तत्त्वके कार्यकी श्रद्धा बैठ गई... समझमें आता है? आपके प्रोफेसरसे ये दूसरी बात है. उसमें यह बात आती नहीं. वहां तो इलाना-इलाना, ठीकना (ऐसा सब आता है). मैं वीतराग. कलो, सुजानमलज! ये दूसरी बात है कि नहीं? दूसरी बात है. आलाल..!

अनंत संसार तिर जाता है. अनंत संसार. अनंत संसारका अर्थ-जो शुभ-अशुभभाव अनेक प्रकारका है, अनंत परपदार्थ है, उसमें अपनी बुद्धि है, वह मेरा है, वह अनंत संसार है. और उससे रहित अपना स्वभाव संसारभाव और संसारइवसे रहित है, उसकी दृष्टि जिसको दुर्घ, वह अनंत संसारको तिर जाता है. उसको भव रहता नहीं. समझमें आया? यह मात्र भगवानकी भक्ति और शुभरागकी बात नहीं है, हां! वह तो पहलेसे यही आती है. दुनिया मान लेती है कि भगवानकी भक्ति करो, पूजा करो.

अजमेरकी मंडली आती है न? तो पहले (संवत्) २००६की सालमें. दस साल हुआ. देणो महाराज! सोभाग्यंद डॉक्टर. वो, अंजनयोर भी तिर गया, निःशंक हुआ तो. अरे...! सुनो तो सही. ऐसा निःशंकपना अनंत बार किया. क्या तिरें? वज्रभाई! भजनमंडलीमें सोभाग्यंद वलके बडे है न. पूरे मंडलके बडे हैं. सब भक्ति वह बनाते हैं. अभी तो पहली बार मिले थे. २००६की साल. राजकोट. प्रवचन सुने. अंजनयोर भी निःशंक हुआ तो तिर गया. भक्तिसे तिर जाते हैं, यह बात सच्यी नहीं है. जैनदर्शनमें ऐसी-वैसी बात है नहीं. वह तो शुभराग था. वह तो भविष्यमें आत्मज्ञान, सम्यग्दर्शन पाया तो उसका आरोपपूर्वक कला. निःशंकका व्यवहार रागमें करके कथन कर दिया है. हजारीमलज! आते हैं कि नहीं आठ? रत्नकरंड श्रावकाचारमें नहीं आता है? निःशंक, निःकांक्षित आदि आठ नाम आते हैं. तो क्या हुआ? वह तो भविष्यमें अपनी वस्तुकी स्थिति श्रद्धा-ज्ञानमें सर्वज्ञ परमात्मा जैसे आत्मा लिया तो पूर्वके रागमें आरोप कर, उससे तिर गया ऐसा कहनेमें आया है. ऐसी रागकी मंदता, निःशंकता तो अनंत बार की.

‘मुनिव्रत धार अनंत बैर, त्रैवेयक उपजायो.’ उसमें निःशंकता नहीं थी? बाह्यकी व्यवहार निःशंकता. ‘आत्मज्ञान बिन लेश सुभ न पायो.’ अनंत बार मुनिव्रत धारण किया, उसमें क्या हुआ? भगवान आत्मा एक सेकंडके असंख्य भागमें पूर्णानंदकी शक्तिका बंडार पडा है. निर्विकल्प अल्ले स्वभावकी दृष्टि किये बिना कभी तीन काव, तीन लोकमें अनंत संसारका उद्धार होता नहीं. वह कहते हैं. प्रभु! हमारे अनंत संसारका उद्धार हो गया. ओहोहो..!

‘भावार्थ :- हे प्रभु! इस संसारमें जितने भी जिव हैं, वे सब सामान्यतया अज्ञानी हैं. उनको स्वयं तो वास्तविक मार्गका ज्ञान नहीं है.’ स्वयंको ज्ञान है नहीं. ‘यदि उन्हें वास्तविक ज्ञानकी प्राप्ति करना है तो आपके वचनों पर श्रद्धान करना आवश्यक है,....’ दूसरेसे कुछ होता नहीं. आप सर्वज्ञ परमात्मा जैन परमेश्वर वीतराग त्रिलोकनाथ, जिसको सौ ईन्द्र पूजते हैं. आपकी वाणीमें जो भाव आया, उस भावकी जो श्रद्धा करता है उसको ही मुक्ति प्राप्त होती है. दूसरेको होती नहीं. ‘आपके वचनों पर श्रद्धान करना आवश्यक है, अतः हे प्रभो! जिन मनुष्योंको आपके वचनों पर श्रद्धान है, वे मनुष्य, अनंत संसार-समुद्रको शीघ्रतासे ही तिर जाते हैं;....’

‘हेलाए’ आया है न? उसका अर्थ क्या है न? वीलामात्रमें. .. वीलामात्रमें, शीघ्रतासे. प्रभु! आपने जो मार्ग कला, ऐसा हमको बैठ गया, हमको बात रुचि है. हमारे समीप आप आ गये हो. हमारी श्रद्धा, हमारा ज्ञान शुद्ध स्वभावमें है. तो हम भी अल्प कालमें संसार-समुद्र तिर जायेंगे, यह आपकी भक्तिका प्रताप है. ऐसा आरोप करके वर्णन किया है. वास्तविकतासे तो निश्चय निज स्वयंपकी श्रद्धा-ज्ञान करना वह अपनी भक्ति है. समझे? व्यवहार भक्तिका आरोपसे कथन करनेमें आता है. ‘अनंत संसार-समुद्रको शीघ्रतासे ही तिर जाते हैं; किन्तु जो मनुष्य, आपके वचनों पर श्रद्धा नहीं रखते...’ यहां-वहां भटकते हैं. सर्वज्ञ वीतराग त्रिलोकनाथ परमात्मा जैन परमेश्वर गिनको अेक समयमें पूर्ण परमेश्वरता प्रगट हुई. आत्मा ज्ञायक जोल दिया. शक्तिमें पूर्ण था, पर्यायमें-अवस्थामें जोल दिया.

भगवानकी कथनशैली जो उसमें निकली वही भगवानकी परमात्मदशाको प्राप्त करनेकी वाणी है. उसको नहीं मानकर दूसरेको मानता है और कहीं भी माथा झोडता है, उसको कभी संसारका अंत आता नहीं. कलो, बराबर है? सुजानमलज!

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- माथा झोडकर मर जाये, बाहरमें क्या है? माथा ही कहां आत्माका है, वह तो जड है. शरीर मिट्टी जड है, धूल है. उपवास करके मर जाये, क्षीण हो जाये छ-छ महिनेके उपवास करके, मर जाये तो भी क्या है, यहां कहते हैं. क्षीण हो जाये तो भी धर्म नहीं, उसमें धर्म नहीं है. ओहोहो..! भगवान! आपने जो आत्माका स्वभाव निर्विकल्प वीतराग रागरहित कला, उसकी श्रद्धा बैठ गई, हमारा संसार तिरनेमें टेर नहीं है.

जैसे जलजवाला समुद्रको तिर जाता है. जिसके पास जलज नहीं है, वह पार नहीं कर सकता. अस्त-नास्ति की. भगवान! आपकी वाणी तो संसार-समुद्र तिरनेकी नाव है. समझमें आया? संसार-समुद्र तिरनेकी नाव आपकी वाणी है. वाणीका अर्थ भाव. ३३.

तुह वयणं चिय साहइ, णूणमणेयंतवादवियडपहं।

तह हिययपईइअरं, सव्वत्तणमप्पणो णाहा।३३।।

हे गिनेन्द्र! हे प्रभु परमात्मा! ‘वास्तवमें आपके वचन ही अनेकांतवाट रूपी विकट मार्गको सिद्ध करते हैं...’ ओहोहो..! क्या कहते हैं? अनेकांत, आत्मामें त्रिकाल नित्यता भी है और आत्मामें अवस्थाका पलटन-परिणामन स्वभाव भी है, यह आपकी वाणी सिद्ध करती है. अज्ञानी कहते हैं, आत्मा नित्य है तो नित्य ही होता है, अनित्य है तो अनित्य ही होता है. बौद्ध आदि अनित्य ही मानते हैं, सांध्यमति आदि आत्माको अेकांत नित्य ही मानते हैं. अेकांतवादीको आत्माका पता लगता नहीं. आप तो अनेकांत

सिद्ध करते हो.

.. आत्मा द्रव्य पदार्थ अपनेसे है और परसे नहीं है. पर आत्मा परसे है और स्वसे नहीं है. अपनेसे वह नहीं और उससे मैं नहीं. और अक-अक पदार्थमें अनंत गुण है, अक-अक गुण अक-अक गुणसे है और दूसरे गुणसे नहीं है. अक-अक समयकी पर्याय अपनी पर्यायसे है और आगे-पीछेकी पर्याय-अवस्थासे वर्तमान पर्याय नहीं है. समझमें आया? मज्जनलालज! ऐसा अनेकांत मार्ग विकट मार्ग है, विकट मार्ग है. आहो..! लोगोंको अनेकांत विपरीत घुस गया है न. भगवानका अनेकांत मार्ग है. निमित्तसे भी होता है और अपने उपादानसे भी होता है. ऐसा अनेकांत है ही नहीं. और व्यवहार क्रियाकांडसे भी धर्म होता है और स्वभावके आश्रयसे भी धर्म होता है. ऐसा है ही नहीं. अनेकांतवादीका कथन मिथ्यादृष्टि मूढका है.

भगवान! आप अनेकांत सिद्ध करते हो. जैसे होता है, अपने चैतन्य स्वभावसे शांति मिलती है और जितना पुण्य-पापका विकल्प उत्पन्न होता है, उससे बंध होता है. उससे शांति-धर्म कभी होता नहीं. ऐसा अनेकांतवादी विकट तो है, सूक्ष्म तो पड़ता है. आपने उसको सरल करके बता दिया है. समझमें आया?

‘अनेकांतवादी इपी विकट मार्गको सिद्ध करते हैं तथा आपका सर्वज्ञपना ही समस्त मनुष्योंके हृदयका प्रकाश करनेवाला है.’ ओहो..! दो बात की. अक तो आप प्रत्येक पदार्थमें अस्ति-नास्ति आदि अनंत-अनंत धर्मोंकी बात करते हैं. अस्ति-अपनेसे है और परसे नहीं. उसका नाम अनेकांत है. अपनेसे भी है और परसे भी है, ऐसा अनेकांतवादी नहीं है. वह तो अनेकांत हो गया. कोई भी पदार्थ हो, अंगुली हो तो अक अंगुली अपनेसे है और दूसरी अंगुलीसे नहीं है. तो वह अपनेसे अपनेमें अस्ति भी धारण करती है और दूसरेसे नास्ति भी धारण करती है. उसका नाम अनेकांत है. जैसे अपना स्वभाव अविकारी अपनेसे प्राप्त होता है. विकल्प दया, दान, भक्ति, व्रत, तप, पूजा, दानादिका राग हो, उससे उत्पन्न नहीं होता. उससे धर्म उत्पन्न नहीं होता. ऐसा अनेकांतवादी विकट मार्ग है तो भी आप उसको सिद्ध कर सकते हैं. कहां, समझमें आया?

सर्वज्ञकी बात है. प्रभु! आप सर्वज्ञ हो. दुनियाको प्रकाशित करते हो. तीन काव तीन लोकको ज्ञाननेकी ताकत भगवानको प्रगट हुई, वह आत्मा है. सर्वज्ञपद कहांसे आया? पर्याय कहांसे आयी? प्राप्तकी प्राप्ति है. अंतरमें वह सर्वज्ञशक्ति पडी हो तो प्राप्त होता है. बाहरसे तो आती नहीं. सर्वज्ञपदको आपने घोषित किया तो प्रकाश हो गया लोगोंमें. ओहो..! हमारा आत्मा भी सर्वज्ञ होनेकी ताकत रखता है. अल्पज्ञ और राग-द्वेषका अभाव कर आत्मा सर्वज्ञस्वभावी अंतरमें पडा है, उसको आत्मा प्राप्त कर सकता है, ऐसा प्रकाश प्रभु! आपने सर्वज्ञपनासे किया है.

‘समस्त मनुष्योंके हृदयका प्रकाश करनेवाला है.’ समस्त मनुष्योंके? क्या करते हैं? सब मनुष्योंके हृदयमें प्रकाश किया. सब मनुष्य मानते थे? प्रभु! मनुष्य ही उसे कहे कि जो आपकी बात मानते हो. उसे मनुष्यमें गिनते हैं. भाई! समझमें आया? वह मनुष्य है. दूसरा तो पशु है. तिर्य्य है-पशु है. .. मनुष्य है. आपकी वाणी, सर्वज्ञ हुआ और वाणी निकली तो सर्व मनुष्योंके हृदयमें प्रकाश करनेवाली है. मन्यते इति मनुष्य, ज्ञायते इति मनुष्य. अपना स्वभावको प्रकाश करते हैं, उसको मनुष्य करते हैं. बाहरका (शरीर) मिला उसको मनुष्य करते नहीं.

एक बार कहा था न? श्रीमद् राजचंद्रने कहा, मनुष्य किसको करना? वज्रभाई! मोक्षमालामें पाठ लिया है. मोक्षमालामें. सोलह वर्षमें, सोलह वर्षकी उम्रमें. श्रीमद् राजचंद्र. आपके वहां हो गये न? ववाणिया मोरनीके पास. २१ माईव है. श्रीमद् राजचंद्र. संवत् १८२४में जन्म और १८५७की सालमें देह छूट गया. उन्होंने सोलह वर्षकी उम्रमें मोक्षमाला बनाई. १०८ पाठ. सोलह वर्षकी उम्रमें. संवत् १८४०, जन्म संवत् १८२४में. उसमें १०८ पाठ बनाकर मोक्षमाला नाम रखा. उसमें एक मनुष्यका पाठ है. मनुष्य क्यों करते हैं? पांच इन्द्रिय है, इसलिये? तो पांच इन्द्रिय तो बंदरको भी होती है. लेकिन बंदरको तुल्यसे अधिक पूंछ मिली है, तो उसको बड़ा मनुष्य करना चाहिये. भाई! समझमें आया? इन्द्रिय मिली है, दो पैर है, दो हाथ है, दो आंख है, नाक है. ऐसा मिला तो बंदरको भी मिला है. तो बंदरको तो पूंछ विशेष अधिकमें मिली है. तो उसको मनुष्य करना. नहीं, नहीं. मनुष्य उसको नहीं करते.

मनुष्य किसको करते हैं? स्व-पर विवेक करे उसको मनुष्य करते हैं. सोलह वर्षमें, हां! केवलचंद्रभाई! सोलह वर्षमें. आहा..! स्व-परका विवेक है. विकार भिन्न है, मेरा स्वभाव भिन्न है. शरीर भिन्न है, कर्म भिन्न है, परपदार्थ भिन्न है. ऐसा विवेक करे सो मनुष्य. तो सर्व मनुष्योंको, प्रभु! आपकी सर्वज्ञकी वाणी निकली, सर्वज्ञपद सबको प्रकाशो. ओहो..! उसमें विकार और परकी उपेक्षा कर, स्वभावकी अपेक्षा करके सर्वज्ञपद मिला तो सबको ऐसा भान हो गया, हम तो ऐसा मानते हैं. आपकी वाणीका प्रसाद सबको मिल गया. ओहोहो..! मुझे मिला तो सबको मिला, ऐसा करते हैं. वज्रभाई! जुद्धका पेट भर गया तो सबका पेट भर गया.

भावार्थ :- ‘हे जिनेंद्र प्रभो! संसारके समस्त पदार्थ अनेक धर्मस्वरूप है.’ जब वाणी द्वारा उस पदार्थोंके अनेक धर्मोंका वर्णन करनेमें आता है तब उसका वास्तविक स्वरूप समझमें आता है. किन्तु एक धर्मके कथनसे उस पदार्थका वास्तविक स्वरूपमें समझमें आता नहीं. हे भगवन्! क्या करते हैं? कोई भी पदार्थ है न? आत्मा हो, परमाणु हो, आकाश हो, धर्मास्ति हो, अधर्मास्ति हो, काल हो. जो पदार्थ है उसमें एक धर्म नहीं

होता. क्यों? कि एक पदार्थ अपना अस्तित्व दूसरे अनंत पदार्थके बीच रखता है. अस्तित्व. तो अनंत-अनंत पदार्थसे पृथक् रहनेकी उसमें अनंत धर्मकी ताकत है. समझमें आया?

आपकी कथन पद्धति, अनंत पदार्थ है, अनंत आत्मा है, अनंत परमाणु है. उसमें आपने जैसा सिद्ध कर दिया कि एक पदार्थमें एक, दो, चार, पांच संख्यात धर्म होते नहीं. धर्म नाम उसकी ताकतमें एक, दो, चार शक्ति (नहीं है), उसमें अनंत ताकत है. क्योंकि अनंत पदार्थके बीच अपनी शक्ति अपने कारणसे टिक रहा है और पररूप कभी हुआ नहीं. आत्मा आत्मापने सदा रहा और परमाणुरूप कभी हुआ नहीं. परमाणु परमाणुपने सदा रहा, दूसरा परमाणुपने और दूसरे आत्मापने कभी नहीं हुआ. जैसा एक-एक पदार्थ अनंत पदार्थरूप नहीं हुआ, जैसा अनंत धर्म एक-एकमें आपने सिद्ध किये हैं. समझमें आया? कठिन बात, भाई! लोग तो बोले, धर्म करो, ये करो, व्रत करो, तप करो, उपवास करो, ये करो. अरे..! सुन तो सही, वह सब तो रागकी क्रिया है. धर्म-धर्म कहां रखा है उसमें?

यहां तो कहते हैं कि आत्माका स्वभाव शुद्ध रहता है. तब आत्मामें रागरूप नहीं होना, रागरहित नहीं होना जैसा भी उसमें धर्म है. रागरहित होना धर्म है और रागरहित नहीं होना उसका धर्म है. समझमें आया? जैसा अनेकांत पदार्थ अनंत धर्म, अनंत धर्म (युक्त है). ओहोहो..! एक-एक पदार्थमें ज्ञान ज्ञानरूप है, ज्ञान आनंदरूप नहीं, आनंद आनंदरूप है, आनंद ज्ञानरूप नहीं. परमाणुमें रंग है, वह रंग रंगरूप है, वह गंधरूप नहीं है. गंध गंधरूप है, वह रसरूप नहीं. रस रसरूप है, वह स्पर्शरूप नहीं. वह अपनेसे है और पर अनंतसे नहीं है. ये है, आप कहते हो उसमें अनेकांत धर्म-अनंत धर्मकी सिद्धि हो जाती है. समझमें आया? कठिन बात, भाई!

पृथक्ता बताते हैं, देओ! अनंत है. और एक पदार्थमें अनंत गुण है, जैसा कहते ही अनंत गुणकी पृथक्ता अपना धर्म रखकर, दूसरा धर्म और दूसरे पदार्थरूप नहीं होना, जैसी ताकत एक-एक गुण, एक-एक द्रव्य, एक-एक पर्याय रहते हैं. बराबर है? नेमचंद्रभाई! ओहोहो..! क्या कहते हैं? धर्ममें जैसी बात कैसी? अरे..! धर्म कोई अचिंत्य वस्तु है या धर्मकी लोगोंने कल्पना कर ली है? कि कर लिया. पांच-पचास हजारका भ्रम कर दिया. दो-पांच-पचीस मंदिर बना दिये. धर्म होगा. धूलमें भी धर्म नहीं है, सुन तो सही. धर्म कहांसे आया? अरे.. वज्रभाई! पोपटभाई!

मुमुक्षु :- भावनगर ..

उत्तर :- उसने बराबर किया था. बहुत समझकर किया था उसने. ठीक याद किया. राजकुमारने ईन्दौरमें किया था न. बराबर सात प्रवचन सुनकर आधा घंटा बोले थे. बहुत बोले थे. राजकुमार. वज्रभाई वहां बोले थे.

वास्तविक स्वरूप समझमें आता है. परंतु दो ही धर्मके कथनसे पदार्थका वास्तविक स्वरूप समझमें नहीं आता. आह्लाहा..! वह एक पदार्थकी व्याख्या की. पदार्थ है. पदार्थमें धर्म नाम शक्ति एक नहीं होती. अनंत शक्ति बिना पदार्थ होता ही नहीं. अनंत अनंत शक्तिके बिना अनंत पदार्थके बीचमें अपना अपनत्व टिकना, रचना, वह अनंत शक्ति, संप्रियासे अनंत शक्ति, हां! तीन काव टिकना नहीं, वह तो कावकी अपेक्षासे, परंतु एक पदार्थमें अनंत पदार्थके बीचमें रहना और अनंत परपदार्थ रूप नहीं होना, उसकी अनंत ताकत आप सिद्ध करते हो. एक परमाणु हो या एक आत्मा हो या एक आकाश हो या एक कावाणु हो. छलें द्रव्यमें भगवान आप अनंत धर्म सिद्ध करते हो.

एक बार कला था, कला था न? संप्रदायमें पूछा था. धर्मास्तिकायके गुण कितने? तो कला, दो. अरुपी और गति. ये बेरिस्टर. ओ.. छोटाभाई! ये आपके बेरिस्टर. कहां गये मलूक्यंदभाई? धर्मास्तिकाय पदार्थ है न? उसमें एक गति धर्म और एक अरुपी (धर्म). अस! हो गया? अस, क्या पढते रहते हो? मुझे कला. दो वर्षकी टीकाके पहले. (संवत्) १९७२. अस, दो धर्म है. कुछ मालूम नहीं. और माने क्या? हम जैनके बेरिस्टर है. आप थे कि नहीं? मलूक्यंदभाई! सुना था? अरे..! भगवान!

सर्वज्ञ परमात्माने पदार्थका वर्णन किया, वह पदार्थ है. अनंत. अनंत कहते ही अपने स्वभावमें एक रूप नहीं होना, दूसरे रूप नहीं होना, तीसरे रूप नहीं होना, चौथे रूप नहीं होना, जैसे अनंत रूप नहीं होना. ऐसी अनंत ताकत सिद्ध की. एक-एक पदार्थमें अनंत गुण है. हे, ऐसा सिद्ध करते हैं. एक गुण दूसरा गुणरूप नहीं, तीसरा गुणरूप नहीं, अनंत गुणरूप नहीं है. एक द्रव्यकी एक समयकी पर्याय-अवस्था-हालत-पूर्वकी पर्याय रूप नहीं, भविष्यकी पर्यायरूप नहीं, गुणरूप नहीं, द्रव्यरूप नहीं, अनंती दूसरी पर्यायरूप नहीं. उसके बिना पदार्थ सिद्ध होता नहीं. कलो, समझमें आया?

हे प्रभु! हे भगवन्! आपके सिवा जितने देव हैं, उन सबकी वाणी अंकांत मार्गको सिद्ध करती है. एक धर्म, दो धर्मकी शक्ति अथवा तो एक ही आत्मा है. या तो आत्माका स्वरूप विज्ञानस्वरूप एक ही है. ऐसी बात करते हैं. या तो आत्मा अनित्य ही है, या तो आत्मा नित्य ही है, या तो आत्मा शुद्ध स्वभावरूप है तो पर्यायरूप भी अशुद्ध ही है. या तो पर्याय अशुद्ध है तो वस्तु भी त्रिकाव अशुद्ध है. ऐसा एक-एक धर्मकी बात करनेवाले वस्तु-पदार्थको सिद्ध कर सकते नहीं. पदार्थ जैसा है वैसी वास्तविक बात ही सिद्ध कर सकते नहीं. आपकी तरह वास्तविक वस्तुका स्वरूप सिद्ध करनेवाले नहीं है.

ईसलिये उनकी वाणी वस्तुके वास्तविक स्वरूपका कथन नहीं कर सकती. ऐसा तो कहे न कि, तूम हो? हां. कबका है? अनंत कावसे. अकेला या परसे (है)? हूं तो अपनेसे. मैं परसे नहीं हूं. परसे नहीं हूं और स्वसे हूं. उसमें पूरा हो गया. अनंत धर्म उतनेमें,

अेक समयमें सिद्ध हो गये. अनंत धर्म नहीं हो तो वह पदार्थ अपनेसे टिक सकता नहीं. ऐसी वाणी परमात्मा आपके सिवा होती नहीं. कलो, बराबर है? ये भक्ति करते हैं, भक्ति. बड़ी भक्ति, भाई!

ये वास्तविक पदार्थका ज्ञान और श्रद्धा करना उसका नाम आत्माकी भक्ति (है). वही निश्चय भक्ति है. भगवानकी भक्ति आदि, पूजा, स्तुति आदि तो शुभभाव व्यवहार भक्ति कलनेमें आती है. लेकिन निश्चय भक्ति हो तो व्यवहार कलनेमें आती है. निश्चय नहीं हो तो व्यवहार कलनेमें आता नहीं. क्योंकि उसमें भी धर्म सिद्ध हुआ कि निश्चयमें व्यवहार धर्म नहीं और व्यवहारमें निश्चय धर्म नहीं. समझमें आया?

भगवान! आप ही उस बातको सिद्ध कर सकते हो. दूसरे की ताकत नहीं है. अज्ञानी देव कि जिसने तीन काल ज्ञाना नहीं, सर्वज्ञपना प्रगट नहीं हुआ है, उसने पदार्थकी ताकतकी स्थिति भी ज्ञानी नहीं. तो दूसरा वह बात सिद्ध नहीं करेगा. आपकी वाणी अनेकान्त मार्गको सिद्ध करनेवाली है. देओ! सम्यग्दर्शन. आत्मा अजंड आनंदसे भरा है, उसकी प्रतीत सम्यग्दर्शन (है). और उसकी श्रद्धा नहीं करनी वह मिथ्यादर्शन. और मिथ्यादर्शनमें सम्यग्दर्शन नहीं, और सम्यग्दर्शनमें मिथ्यादर्शन है नहीं. अपना ज्ञान हुआ सम्यक्में, चैतन्य स्वसंवेदन हुआ तो उस ज्ञानमें अज्ञान नहीं. और आत्माका भान नहीं और अज्ञान है उसमें सम्यक्ज्ञान नहीं. ऐसा सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक्चारित्र. स्वभाव स्वरूपका भान होकर स्थिर हुआ चारित्र, उसमें अचारित्र नहीं है. पंच महाव्रतका विकल्प आदि उठते हैं वह अचारित्र है. अष्टापीस मूलगुणका (विकल्प) मुनिको उठता है वह भी अचारित्र है. अचारित्रमें चारित्र नहीं और चारित्रमें अचारित्र नहीं. समझमें आया? ऐसी बात तो प्रभु! आप ही कर सकते हो. इसलिये उसी पदार्थके वास्तविक स्वरूपका वर्णन कर सकते हैं.

तथा 'आपके सर्वज्ञपनेसे समस्त मनुष्योंके हृदयका प्रकाश होता है.' सर्व पदार्थका स्वरूप ज्ञाना और कला और वैसी ताकत आपको प्रगट हुई, ऐसी ताकतका जो दृष्टिमें आदर्श लेता है, कि ओलो..! मैं भी ऐसा ही आत्मा हूं. वह भी आत्मा है. मेरी ज्ञातिका आत्मा है. उसे ऐसी शक्ति प्रगट हुई तो आदर्शके रूपमें मेरे आत्मामें भी ऐसी सर्वज्ञशक्ति अंदरमें पड़ी है. सर्वदृष्टा सर्वज्ञ शक्तिमें वर्णन आया. सर्वज्ञशक्ति है उसके आश्रयसे मेरा सर्वज्ञपद होगा, ऐसा प्रकाश आत्माको सम्यक्ज्ञानका आपकी वाणीसे मिलता है, दूसरेकी वाणीसे मिलता नहीं. समझमें आया?

'समस्त मनुष्योंके हृदयका प्रकाश होता है अर्थात् जिस समय आपका यथार्थ उपदेश होता है,...' यथार्थ ना? यथार्थ उपदेश आप देते हो, 'उस समय अन्य ज्योंके हृदयमें भी पदार्थोंका यथार्थ ज्ञान होता है.' धर्मका मूल सर्वज्ञ है, ऐसा कहते हैं. धर्मका कथन करनेवाले सर्वज्ञ परमात्मा. ज्ञानकी पूर्ण शक्तिका विकास उनको हुआ वही धर्मका

कहनेवाले हैं. आपने कहा तो दुनियाके हृदयमें प्रकाश हो गया. हम भी सर्वज्ञ होनेके लायक है. हम अल्पज्ञ या रागमें रहनेके लायक नहीं है. ऐसा प्रकाश हृदयमें आपकी वाणीसे होता है. ३४.

विष्पडिवज्जइ जो तुह गिराए मइसुइबलेण केवलिणो।

वरद्विद्विदिद्वणहजंत-पविखगणणेवि सो अंधो॥३४॥

आहा..! अब, दूसरेके साथ मिलान करके बात करते हैं. भगवान! आपकी आंभे... प्रवचनसारमें कहते हैं कि, सर्वज्ञके असंभ्य प्रदेशमें अनंत यक्षु हैं. सर्वयक्षु. उसको सर्वयक्षु कहते हैं. असंभ्य प्रदेशमें शक्ति है. जैसे छोटीपीपरमें, छोटीपीपरके दाने-दानेमें चौसठ पड़ोरी तीजास-ताकत-चरपराई पड़ी है तो प्रगट होती है. है तो प्रगट होती है. जैसे अपने आत्मामें, अक-अक आत्मामें सर्वज्ञ और पूर्णानंदकी शक्ति पड़ी है. नेमयंदभाई! बराबर होगा यह?

‘हे भगवान! जो मनुष्य, मतिज्ञान...’ क्या कहते हैं? देओ! ‘मतिज्ञान-श्रुतज्ञान...’ यहां श्रुतअज्ञान लेना. उसके ‘बलसे आप केवलीके वचनोंमें विवाद करता है;...’ सर्वज्ञने ऐसा कहा है, उसमें वाद करते हैं. नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होता, ऐसा नहीं होता. अरे..! लेकिन तू अंधा है. मति और श्रुत अज्ञान है, अंधा है. और जो देभता है उसके साथ तू वाद करता है, तेरा वाद निरर्थक है. भगवान! वह मतिअज्ञान और श्रुतअज्ञानके बलसे आप केवलीके वचनमें विवाद करते हैं. उनका वह कार्य ऐसा है कि ‘अच्छी दृष्टिवाले मनुष्य द्वारा आकाशमें की गई पक्षियोंकी गणनामें अंधे व्यक्तिके समान संशय करता है.’ स्पष्ट आंभोवालेने १०८ बगुले देओ. अंधा कहता है, नहीं. तेरी बात बूढ़ी है. लेकिन तुने देओ नहीं, सुना नहीं. आकाशमें उड़ते हैं, तेरी नजर पहुंचती नहीं. हमारी तो नजर पहुंचती है कि देओ, अक-अक, अक-अक, चलते-चलते, चलते-चलते गिन लिया. उसके साथ अंधा विवाद करे, संशय करे कि आपकी बात किसप्रकारसे बूढ़ी है? क्या कारणसे बूढ़ी है? देओ है तूने? आकाशमें उड़ते पक्षी, उड़ते पक्षी. गति करते लुअे पक्षी लिये न. नीचे हो तो हाथ लगाकर अंधा गिने. हाथ लगाकर. मूल नजर तो है नहीं. समझमें आया?

भगवान! स्पष्ट दृष्टिवाला आकाशमें उड़ते पक्षियोंकी गणना करके कहता है कि १०८ है. अंधा कहता है, नहीं. क्यों नहीं है? कारण क्या? तुजे रंगका भी भान नहीं, आकाशमें तेरी नजर पहुंचती नहीं, गति करते हैं, तेरी नजर घुमती नहीं. नजर ही नहीं है तो घुमे कहाँसे? किसके साथ तू वाद करता है? अंधा. अंधेका दृष्टांत नहीं आता? आया था न? अभी दिया था न? भाई! अक अंधा था. उसको दूध दिया. दूध कैसा है? भाई! अंधा बेचारा जन्मसे होगा. दूध कैसा है? अकदम सकेद है. दूध सकेद है. सकेद कैसा? बगुला जैसा. बगुला कैसा है? ऐसा हाथ किया. दूध देनेवाला अंधेको (कहता है). अंधेने

पूछा, आप दूध देते हो वह दूध कैसा है? सफ़ेद. सफ़ेद कैसा? बगुला जैसे. बगुला कैसा है? तो कला, ऐसा. अंधा कलता है, ऐसा बगुले जैसे दूध भरे गलेके नीचे नहीं उतरेगा. लेकिन तुझे भान नहीं है. हम तो (कलते हैं), बगुला सफ़ेद होता है. तूने पूछा, बगुला कैसा है? दूध ऐसा क्या है? भान नहीं, मावूम भी नहीं है. हम सफ़ेद रंग बताते हैं, तो तू कलता है कि, बगुला कैसा है? बगुला ऐसा है कला तो, तू कलता है कि, ऐसा दूध भरे गलेके नीचे नहीं उतरेगा. मूढ़ है.

ऐसे सर्वज्ञ परमात्मा अनंत सर्वयक्षु है. तीन काव तीन लोक देखा, उसमें जो सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्रिका मार्ग बताया, अपनी ऋद्धि संपदा अंदर भोवकर बताया कि देखा, तेरी ताकत छतनी है. अल्पज्ञ ज्ञानमें तुझे विशेष ज्ञान होता है. अल्प ज्ञानके अभावमें विशेष आया कहांसे? अल्प ज्ञान तो चला गया, विशेष (ज्ञान) हुआ. व्यय हुआ, उत्पाद हुआ. तो आया कहांसे? तेरी शक्तिमें अधिक ज्ञान पूर्ण पडा है, उसके अवलंबनसे आता है. ऐसा भगवान! आप सर्वज्ञसे बात करते हो, अंधा विश्वास नहीं करता है. अंधा संशय करता है कि ऐसा नहीं होता.

अभी तो कितने ही लोग सर्वज्ञका संशय करते हैं न. एक समयमें भगवान तीन काव तीन लोक जाने. तो-तो सबकी बातका अंत हो गया, सबकी बातका अंत हो गया. अरे...! मूढ़! तू क्या (कलता) है? अंत क्या? अनंत है उसको अनंत जानते हैं. जानते हैं तो वहां अनंतका अंत आ गया? समझमें आया? वज्रभाई! क्या कलते हैं? छैनी होती है न? छैनी. गोव छैनी होती है न? गोव. छैनी मारते हैं न? ... कहांसे उसकी शुरुआत हुई? शुरुआत देणे बिना उसे देणी हम नहीं कलते. लेकिन शुरुआत है नहीं ऐसा देखा. गोव है, ऐसा गोव है. थावी गोव होती है न? थावी है, देणकर कला. थावीका किनारा कहांसे शुरू हुआ? शुरू हुआ ऐसा देणो नहीं तो देणो नहीं. लेकिन शुरुआत है नहीं तो कहांसे शुरुआत जाने? गोव चक्कर है.

ऐसे वस्तु अनादिअनंत है. अनादिअनंत है, आदि कहां? अंत कहां? जैसी चीज है ऐसी ज्ञानमें लेते हैं. अंधा. मति-श्रुतके तर्कसे, वितर्कसे अज्ञानी मूढ़ तर्क करता है. वह अंधे जैसा है. सर्वज्ञके पास ... कलो, बराबर है?

भावार्थ :- 'जिसकी दृष्टि अत्यंत तीक्ष्ण है ऐसा कोई मनुष्य, आकाशमें उडते हुआ पक्षियोंकी गणना करे और उस समय पासमें बैठा हुआ कोई अंधा पुरुष, उन पक्षियोंकी गणनामें विवाह करे...' गणनामें विवाह करे. अरे...! लेकिन तूने देखा नहीं और गिनती कहांसे लाया? ऐसे भगवानने देणे अनंत पदार्थ, अनंत आत्मा, अनंत गुण, भान नहीं है. तू अंधा है और उसके साथ वाद करने जाता है. व्यर्थमें रजस जायेगा, कलते हैं. जैसे उस तीक्ष्ण दृष्टिवाले पुरुषके सामने 'उस अंधेका विवाह करना

निष्कल है;...' निष्कल है न देजनेवालेके सामने?

'उसी प्रकार हे प्रभो!' हे गिनेश! 'कोई मति-श्रुतज्ञानधारी, आपके वचनोंमें विवाह करे तो उसका विवाह करना निरर्थक ही है. क्योंकि आप केवली हैं. आपके ज्ञानमें समस्त लोक-अलोकके पदार्थ, हाथ की रेखाके समान...' हाथकी रेखा देजे जैसे भगवान देजते हैं. सब देजते हैं. उसमें विवाह करता है तो सर्वज्ञपद और आत्माकी पूर्णताकी तुझे जबर नहीं है. उसके साथ तू विवाह करता है तो निरर्थक माथा झोड रहा है. समझे? 'हाथकी रेखाके समान जलक रहे हैं...' देजो! 'और प्रतिवादी मनुष्यके पास..' यहां ज्ञान यानी अज्ञान लेना, हां! सम्यक्ज्ञानी भगवानकी वाणीमें विवाह करते नहीं. वह तो स्वीकार करता है, यथार्थ है, प्रभु! आपकी वाणीमें पदार्थका स्वरूप, जो तत्त्व है वह त्रिकाल निःशंक ... सर्वज्ञ प्रभु परमात्माने जो मार्ग कला, पदार्थ कला वैसा है, उसमें शंका होती नहीं. ये तो अज्ञानीकी बात करते हैं.

'और प्रतिवादी मनुष्यके पास...' जो मतिज्ञानधारी हो और आपके साथ (विवाह) करे तो (उसे) थोड़े पदार्थका ज्ञान है. वह आपके साथ (वाह) करे तो वह मूर्खतामें जाता है. कोई प्यास लगर या अक लाज रुपयेका जर्य करे. और कहे कि मैं भी लाज रुपया जर्य करुंगा. कितनी मुडी है? पांच रुपयेकी. मूर्ख है. लेकिन उसका पुत्र विवाह करता है और वह अक लाजका जर्य करता है तो मैं क्यों नहीं जर्य करुं? मैं अक लाज रुपयेका जर्य करुंगा. अभी अक कलता था, बीस लाज जर्य करने हो तो क्या है? ओलो..! लेकिन तेरे पास तो लाज रुपया भी नहीं है, ये क्या बोलता है? तेरे बापके पास अक लाज नहीं है. बीस लाजका जर्य करना है, उसमें क्या है? तीन-चार लाज रुपया ँकटूठा होना मंदिरके लिये, उसमें क्या है? तीन-चार लाज तुझे मावूम नहीं है. किसे तीन-चार लाज कलना.

जैसे मतिअज्ञानी और श्रुतअज्ञानी सर्वज्ञ परमात्माकी वाणी शास्त्र, पदार्थ, मार्गमें संशय करे वह अंध मनुष्यके समान है. (श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

